ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.19, No.3, July – Sept. ,2024/24

शिवानी–साहित्य : अभिव्यक्ति–शक्ति

सरोजनी कौशल, एम0ए0, पी.एच0 डी0 हिन्दी, डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या
https:// 10.61410/had.v19i3.200

शिवानी की भाषा : सामान्य विशेषताएँ

शिवानी उन लेखिकाओं में हैं जिन्होंने साहित्य में जनमानस की रूचि बढ़ायी। उन्होंने साहित्य और लोकप्रिय साहित्य के बीच की दीवार को तोड़ने में बड़ा योगदान दिया और उसे शिखर पर पहुँचाया, क्योंकि साहित्य जनमानस तक नहीं पहुँचेगा तो साहित्य नहीं कहलाएगा। उन्होंने गम्भीर साहित्य पढ़ने वाला पाठक–वर्ग तैयार किया। इससे बाकी हिन्दी साहित्य भी पढ़ा गया और लोकप्रिय हुआ। इस कार्य में उनकी भाषा बहुत सहायक हुई। लेकिन इस कार्य में न उन्होंने अपने स्तर को छोड़ा, न भाषा को। निश्चित तौर पर हिन्दी साहित्य को उन्होंने भाषा–संस्कार दिया। उनके लेखन की विशिष्टता कसी हुई ऐसी कथात्मकता है जो पाठकों को बाँध कर आगे बढ़ती है। शिवानी ने अपनी भाषा के साथ कभी समझौता नहीं किया और लोकप्रिय होने के लिए उन्होंने अपनी भाषा या कथ्य को सस्ता नहीं बताया। ''शरतृ बाबू हो या रवीन्द्रनाथ ठाकुर दोनों की भाषा में अपार मार्दव, सौष्ठव और लालित्य है, कला–भंगिमाएँ हैं तो साहित्यिक गरिमा और आभिजात्य भी है। इसके बावजूद अगर वे महान हैं तो उसके पीछे उनकी महती और अतुलनीय लोकप्रियता है। लोकप्रिय होने के लिए उन्होंने अपनी भाषा का कथ्य को सस्ता नहीं बनाया। शिवानी के आदर्श इस मामले में कहीं–न–कहीं शरत् बाबू और रवीन्द्रनाथ ठाकुर ही थे। शायद शिवानी को खुद पर और अपने लेखन पर इस मामले में पूरा विश्वास था कि अगर उनके कथा–कथन में ताकत और मार्मिकता होगी, अगर उनके हृदय में पात्रों का सच्चा दुःख बसा होगा, तो जो भाषा वे लिखती हैं उसी में वह दुःख कह उठेगा और पाठकों के दिलों पर पहुंचेगा।'[1]

शिवानी की भाषा पर बाँग्ला कथा–शैली का व्यापक प्रभाव है। ''सत्सम–प्रधान भाषा में स्थिति के अनुरूप आंचलिक शब्दावली में मुहावरों और लोकोक्तियों का सुरूचिपूर्ण प्रयोग एक दक्ष कलाकार की तूलिका की भाँति शिवानी के व्यक्तित्व और कृतित्व को बड़े कौशल से सर्वथा नवीन रंग में रंग जाता है। शब्द–रचना तो और मोहक है। संस्कृतनिष्ठ भाषा होते हुए भी उनकी अभिव्यक्ति में विशिष्ट रवानगी है। कवित्वपूर्ण पंक्तियों से बाँधकर वे अपने पाठक को ललित सम्मोहन में जकड़कर रख देती है। सामाजिक रूढ़ियों, विडम्बनाओं और बाह्मडम्बरों पर सटीक उपमाओं के द्वारा व्यंग्य करना, कहानियों में हास्य एवम् विनोद का पुट देना शिवानी की एक निजी विशेषता है। हिन्दी की प्रांजलता को जिस भाँति मर्यादा–निष्ठा और सांस्कृतिक चेतना के साथ समृद्ध कर शिवानी ने अपनी भाषा को गरिमामय रूप दिया, वह अन्यत्र दुर्लभ है। जिस सौष्ठवपूर्ण और ऋचात्मक भाषा का व्यवहार शिवानी ने अपनी कथा–साहित्य में किया है, वह उनका अनन्य अभिज्ञान है। उनकी कहानियाँ और उपन्यास अधिकतर घटना–प्रधान रहे हैं और उनके निजी अनुभवों पर ही आधारित।

स्त्री–छवि–अंकन और भाषा की भूमिका

शिवानी के उपन्यासों में नारी–छवि के अंकन में भाषा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। उन्होंने स्त्री की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, आयु, क्षेत्र आदि के उपयुक्त ही भाषा का चुनाव किया है। दो चरित्रों के आपस में हो रहे संवादों में उनकी सामाजिक, बौद्धिक स्थिति के अनुसार ही उन्होंने भाषा का प्रयोग किया है। शिवानी ने अपने उपन्यास 'कृष्णकली' में प्रवीर की माँ का चित्रण, 'कालिन्दी' मे

अन्नपूर्णा', 'चल खुसरो घर आपने' में गोदी का चित्रण सामान्य सहज वात्सल्यमयी माता के रूप किया है। इन उपन्यासों में वत्सला की माँ का पूरा चित्र उभरकर सामने आता है और भाषा भी उनकी स्थिति के अनुसार ही प्रयुक्त हुई है। जैसे 'कालिन्दी' उपन्यास में अन्नपूर्णा सहज ममतामयी माता के रूप में अंकित हैं। वे अपनी पुत्री के लिए बराबर चिंतित हैं। वे शिक्षित हैं और उनके ऊपर अपने पिता की विद्वता का प्रभाव है। वे अपनी बेटी से प्रेम करती हैं और उसके विवाह और जीवन की सुखःशान्ति के लिए चिंचित है। उनके विचारों को व्यक्त करने में भाषा ने सहायक भूमिका अदा की है। अपने जीवन के अनुभवों को उन्होंने कालिन्दी के सामने रख दिया – ''मैं कभी कह नहीं पायी पर मुझे हमेशा लगता था कि डॉक्टरी की पढ़ाई ने तेरे मन को सूक्ष्म बना दिया है, तेरा प्रबल स्वतन्त्रता–बोध, तेरी एकाग्र ज्ञान–निष्ठा तुझे धीरे–धीरे स्वाभाविदक जीवन–धारा से काटती जा रही है। तू कभी झुकना नहीं सीख पाएगी। जहाँ बैर की प्रबल भावना होती है, वहाँ फिर प्रेम नहीं रहता और जहाँ प्रेम नहीं रहता वहाँ फिर सहज सृष्टि भी नहीं हो सकती। मैं आज तुझसे एकान्त में यही कहने आयी हूँ चड़ी, कभी किसी जिद में कोई प्रण नहीं कर बैठना। मैंने यही भूल की थी और मेरे मायके के मिथ्या दम्भ ने ही शायद मुझे ससुराल के प्रति उदासीन कर दिया। मनुष्य तो पशु को भी साध सकता है। सर्कस के शेर–भालुओं को नहीं देखा ? मैं चाहती तो क्या तेरे पिता को ..... खैर, छोड़ उन बातों को, पर इतना तुझसे कह दूँ बेटह, संसार की कोई भ्झी स्त्री मायके के सहस्र सुख भोगने पर भी एक दिन ऊबने लगती है, अपनी शक्ति, अपनी सामर्थ्य ही उसे डंक देने लगती है। जो भी कदम उठाओगी सोच–समझकर उठाना। अपने अंहकार को अपना शुत्र मत बनने देना, चड़ी।''[2] अन्नपूर्णा को यहाँ पर अच्छी माँ की भूमिका में देखा जा सकता है। उनके द्वारा कालिन्दी को दिये गये सुझावों को व्यक्त करने में भाषा सहायक सिद्ध होती है। उनके द्वारा प्रयुक्त शब्द जैसे – 'सूक्ष्म', 'स्वतंत्रता–बोध', 'एकाग्र ज्ञान–निष्ठा', 'जीवन–धारा', 'सृष्टि', 'दम्भ' आदि शब्द उनकी विद्वता के भी परिचायक हैं और उनके स्वतंत्र चिन्तन–बोध को भी दर्शाते हैं।

शिवानी के उपन्यासों में नारी की प्रेमिका–छवि बहुत महत्वपूर्ण रूप से चित्रित हुई है। उन्होंने प्रेमिका रूप में आने वाली विभिन्न मनः स्थितियों का बड़ा मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। एक प्रेमिका का द्वन्द्व, उनकी चाहत, विवशता का उन्होंनपे बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। वैसे तो उनके प्रत्येक उपन्यास में किसी–न–किसी रूप में स्त्री की प्रेमिका–छवि आयी है, लेकिन जिस उपन्यासों में यह केन्द्रीय विषय बनकर आयी है उनमें 'मायापुरी' उपन्यास की शोभा, 'चौदह फेरे', की अहल्या, 'घण्टा' उपन्यास की लक्ष्मी आदि को लिया जा सकता है। इन उपन्यासों में प्रेमिका–छवि के चित्रण में उनकी भाषा ने बड़ी भूमिका निभायी है।

शिवानी के उपन्यासों में पुत्री–छवि, बुआ–छवि, सखी–छवि, वेश्या–छवि, सास–छवि तथा दासी अथवा परिचारिका–छवि के चित्रण में भी भाषा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इन पात्रों की विभिन्न मनःस्थितियों, वर्ग, आयु के उपयुक्त ही शिवानी ने भाषा का प्रयोग किया है। एक बुआ अपने भतीजे–भतीजियों से कितना प्रेम और स्नेह रखती है – उसका चित्रण 'श्मशान चम्पा' में रुक्की की बुआ–छवि में होता है। वह अपनी दोनों भतीजियों से बहुत प्रेम करती है। वह छोटी भतीजी जया के पहनावे पर एक अभिभावक की तरह चिन्ता करती है और कभी–कभी फटकार भी लगाती है। ''यह भी कैसा जोगिनियों का–सा भेस धरे धूमती है, तू जुहीख –जोगिया लुंगी, रूद्राक्ष की माता और शमशानिया उदासी बीबी–सी मेखला! अरी, किसी ओढ़नी से सामना तो ढाँक–ढूँककर चला कर।'' उपन्यास में वर्णित रुक्की बुआ पढ़ी–लिखी नहीं हैं, इसलिए उनकी भाषा भी साधारण है और आभिजात्य से दूर है।

शिवानी के उपन्यासों में स्त्री–छवि के कई रंग हैं। उनके यहाँ मानसिक प्रवृत्ति और स्वरूप के आधार पर स्त्री–छवि के कई रूप मिलते हैं। जैस–उत्तम कोटि की स्त्री–छवि, मध्यम कोटि की स्त्री–छवि। उत्तम कोटि की स्त्री–छवि में 'श्मशान–चम्पा' की चम्पा, 'चल खुसरो घर आपने' की कुमुद, 'कैंजा' की नन्दी तिवारी और 'कालिन्दी' उपन्यास की कालिन्दी। 'कालिन्दी' उपन्या समे कालिन्दी की स्त्री–छवि उत्तम कोटि की है। उसका पूरा व्यक्तित्व संघर्षो से भरा हुआ है। वह स्त्री के प्रति होने वाले शोषण का विरोध करती है, सामाजिक बुराई के रूप में दहेज के विरुद्ध आवाज उठाती है और व्यक्तिगत जीवन में भी शारीरिक और यौन शोषण के विरुद्ध खड़ी होती है। कालिन्दी ने अपनी शादी में दहेज का विरोध किया और दहेज लेने वाले से कहा, ''चले आये हैं! टापने यह नहीं बताया कि एक दरिद्र शराबी भिखारी अपना बेटा बेचने आ रहौ।[3] कालिन्दी अपने व्यक्तिगत जीवन में रूढ़ियों का विरोध करती है तथा सार्वजनिक जीवन में भी स्त्री की समस्याओं को हल करने के लिए अग्रसर है। सरोज को ससुराल नहीं बुलाये जाने का विरोध करती है। ''कहाँ मुक्त हुई है नारी ? क्या भारतीय नारी जीवन के अधिकांश अंगों में सदा पुरुषाश्रित ही रहेगी ? वह क्यों कभी काली–कराली चंडिका नहीं है बन पाती ? क्योंकि चंडिका बन शिव को भी पैरों तले रौंदने में सक्षम नहीं बन पाती ? कहाँ विलीन हो गयी है रुद्राणी, दश–प्रहरणधारिणी, ? क्या हम लक्ष्मी को सदा विष्णु के चरणों में ही बैठी देखते रहेंगे ? हम भले ही नारी–स्वाधीनता और प्रगति का मिथ्या प्रचार करते न थकें, भले ही हमाा संविधान कहे कि उसने अबला को सबला बना दिया है – अब नारी को कैसा भय और कौ संशय; पर नारी आज भी उतनी ही विवश है, उतनी ही असहाय। कालिन्दी बार–बार आँख मूँदे अडिग बैठी सरोज को देख रही थी। देवी से वह न जाने क्या–क्या माँग रही थी उसे लग रहा था कि पहाड़ की समाज–रचना में भले ही अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हों, नारी की मूल भूमिका आज भी वहीं है –पुरुषाश्रित, पुरुष–परायणा। यदि वह पति के आश्रय में है तो समाज उसे अनायास मान्यता दे देता है। भले ही उसका पति कामी हो , कुटिल हो, कुकर्मी हो, कुबुद्धि हो, किन्तु यदि वह पति के साहचर्य से वंचित है तो बलि का बकरा है उसका मांस कोई भी खा ले, क्या दोष?[4] उपर्युक्त पंक्तियों में एक पढ़ी–लिखी स्त्री का चीत्कार व्यक्त हुआ है जहाँ उसने स्त्री–शोध का विरोध किया है। 'पुरुषाश्रिता', 'काली–कराली चंडिका', 'रूद्राणी', 'दश–प्रहरणधारिणी', 'क्रान्तिकारी', 'पुरुष–परायणा', 'कुटिल', 'कुबुद्धि', आदि उसके शब्द प्रयोगों को देखा जा सकता है।

शिवानी ने अपने उपन्यासों में मनुष्य के स्वभाव के अनुसार ही भाषा का प्रयोग किया है। उत्तम कोटि की स्त्री–छवि को व्यक्त करने में प्रयुक्त शब्द जहाँ ख़ुद अपने वर्ग को चिन्हित कर देते हैं, वहीं निम्न कोटि की स्त्री–छवि में स्त्री के चरित्र और स्वभाव के अनुसा भाव ही नहीं, वाक्यों में प्रयुक्त शब्द भी बदल जाते हैं। 'विषकन्या' उपन्यास की पात्र कामिनी एक निम्न कोटि की स्त्री है। वह जिसको अच्छा कह देती है प्रतिक्रिया–स्वरूप वह वस्तु तुरन्त खराब हो जाती है। उसके अन्दर प्रेम तत्त्व नहीं है। वह कहती है – ''पर मुझे न जाने किस शैतान से प्रेरणा दी और मैं फिर स्वदेश लौट आयी। एयरोड्रोम में पैर धरते ही चित्त में छिपा वहीं शैतान फिर मुझे मंथरा की–सी कुटिल मंत्रणा देने लगा, क्यों न सीधे दीदी की ससुराल जाकर उनसे मिल लिया जाय ?''[5] निम्न कोटि की स्त्री कामिनी के विचारों को व्यक्त करने में 'शैतान', 'मंथरा', 'कुटिल मंत्रणा' आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है। कालिन्दी द्वारा दहेज और अन्य दूसरी सामाजिक बुराईयों को विरोध करने में भाषा का जो पैनापन है, वह स्पष्ट हुआ है। भाषा यहाँ चाबुक की तरह चलती है जो प्रतिपक्षी पर हमला–सा बोल देती है। कालिन्दी के विचारों को व्यक्त करने में शिवानी के प्रभावकारी भाषा का इस्तेमाल किया है। इसी प्रकार मध्यकोटि और निम्न कोटि की स्त्री–छवि के चित्रण में शिवानी ने उसकी विचार–सरणि के उपयुक्त ही भाषा का इस्तेमाल किया है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि शिवानी ने स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व की वकालत करते हुए अपने उपन्यासों में भाषा का संस्कार किया। उनके लेखन की विशिष्टता कसी हुई ऐसी कथात्मकता है जो पाठकों को बाँध कर आगे बढ़ती थी। इस मायने में उनके आदर्श शरत् बाबू और रवीन्द्रनाथ ठाकुर ही थे। तत्समय–प्रधान भाषा में स्थिति के अनुरूप आंचलिक शब्दावली में मुहावरों और लोकोक्तियों को सुरुचिपूर्ण प्रयोग एक दक्ष कलाकार की तूलिका की भाँति शिवानी के व्यक्तित्व और कृतित्व को बड़े कौशल से सर्वथा नवीन रंग में रँग जाता है। शब्द रचना तो और भी मोहक है। संस्कृतिनिष्ठ होते हुए भी भाषा में विशिष्ट रवानगी है। कवितत्वपूर्ण चित्रण की काव्य–पंक्तियों से बाँधकर वे अपने पाठक को ललित सम्मोहन में जकड़कर रख देती हैं। सामाजिक रूढ़ियों, विडम्बनाओं और बाह्याडम्बरों पर सटीक उपमाओं के द्वारा व्यंग्य भरना और उपन्यासों में हास्य एवम् विनोद का पुट देना शिवानी की एक निजी विशेषता है। हिन्दी की प्रांजलता को जिस भाँति मर्यादा–निष्ठ और संस्कृतिक चेतना के साथ समृद्ध कर शिवानी ने अपनी भाषा को जो रुप दिया, वह अन्यत्र दुर्लभ है। जिस सौष्ठवपूर्ण और ऋचात्मक भाषा का व्यवहार शिवानी ने अपने कथा–साहित्य में किया है उसकी पूर्ति भी संभव नहीं है। उन्होंने अपने उपन्यासों में संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, पहाड़ी, भोजपुरी, बंगाली, नेपाली आदि भाषाओं और बोलियों के शब्दों का भी प्रयोग किया है। भाषा की स्वाभाविकता बढ़ाने के लिए शिवानी ने अनेक लोकप्रचलित ठेठ शब्दों का प्रयोग किया है। शिवानी की भाषा में कुछ दोष भी दिखायी पड़ते हैं, खासकर भाषा की पुनरूक्ति को लेकर। उनके उपन्यासों में कुछ शब्द बार–बार आते हैं जो पढ़ते वक्त खटकते हैं। जैसे–दस्यु, खोटा, सिक्का, लाल पड़ गयी, पान के पत्ते–सा, कटकर रह गयी, झाड़–बुहारकर दूर फेंक दिया, नग्न लोमश छाती आदि शब्दों को देखा जा सकता है। शिवानी के उपन्यासों में भाषा में आये उपर्युक्त कुछ दोषों को स्वीकार करते हुए भी इस निष्कर्ष पर पहुँच जा सकता है कि उन्होंने सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि सन्दर्भों–स्थितियों के उपयुक्त ही भाषा का चुनाव किया है। भाषा उनके यहाँ सहायक बनकर आयी है, पात्रों के व्यक्तित्व से वह मेल खाती है, ऊपर से थोपी गयी नहीं है ; कथ्य के वह सर्वथा अनुरूप रहती है और अभिव्यक्ति में सर्वथा समर्थ और प्रभावशाली लगती है।

सन्दर्भ सूची –

1. डॉ0 प्रकाश मनु, नागरिकक उत्तर प्रदेश, पृ0–10
2. शिवानी : कालिन्दी, पृ0–195
3. शिवानी : कालिन्दी, पृ0–36
4. शिवानी : कालिन्दी, पृ0–161
5. शिवानी : विषकन्या, पृ0–46